ORIGINAL RESEARCH PAPER

History

KEY WORDS:

नागरिकों का चरित्र निर्माण एवं सुशासन

रेणु चौधरी शोधार्थी, दर्शनशास्त्र विभाग, राजस्थान विश्व विद्यालय, जयपुर।

उच्च मूल्यों से युक्त सुशिक्षित एवं सभ्य नागरिक मिलकर एक अच्छी शासन व्यवस्था का निर्माण करते हैं वही सुशासन नागरिकों में उत्कृष्ट चरित्र के निर्माण हेतु महत्वपूर्ण है। जिस प्रकार एक अच्छी शासन व्यवस्था नागरिकों में वांछित मूल्यों का विकास करने हेतु एक बुनियादी आधार प्रदान करती है, उसी प्रकार जब नागरिक स्वतंत्र, तार्किक व सामूहिक हित से प्रेरित होते हैं तो वह शासन व्यवस्था में सहभागी बनकर उसे उत्तरदायी, प्रभावी एवं अनुक्रियाशील बनाने का प्रयास कर अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं।

चरित्र निर्माण एवं सुशासन की अवधारणाएँ नयी न होकर हमारी सभ्यता के आरम्भ से ही रही है तथा दोनों ने एक–दूसरे को पोषित किया है। प्लेटो की 'रिपब्लिक' कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र', महाभारत (शांतिपर्व) आदि कई प्राचीन ग्रंथों में सुशासन की अवधारणा को अवलोकित किया गया है, साथ ही समकालीन संदर्भ में महात्मा गांधी की स्वराज (ग्राम स्वराज) की अवधारणा में इसे व्यापक अर्थ में समझा जा सकता है। वहीं चरित्र निर्माण भी प्राचीन काल से दार्शनिक चिंतन का महत्वपूर्ण विषय रहा है जिसका सर्वाधिक चिंतन उपनिषद् में किया गया है।

चरित्र :– चरित्र मनुष्य का आन्तरिक गुण है जो उसके व्यवहार में परिलक्षित होता है। सदाचार, परार्थभाव, कर्तव्य–अकर्तव्य का बोध, संयम आदि विभिन्न नैतिक गुणों से युक्त मनुष्य ही चरित्रवान कहलाता है।[1] मनुष्य के चरित्र का निर्धारण ज्ञानात्मक पक्ष के साथ–साथ भावात्मक व क्रियात्मक पक्षों के द्वारा भी निर्धारित होता है, क्योंकि उचित–अनुचित का बोध होना और इस बोध के अनुसार आचरण करना, दोनों अलग बाते हैं। अतः इन चारित्रिक मूल्यों को जीवन में उतारकर ही मनुष्य उत्तम चरित्र से युक्त बन सकता है।

यही कारण है कि चरित्रवान नागरिक राज्य के विकास में अपना योगदान देकर, इसके राजनैतिक, आर्थिक व सामाजिक आदि विभिन्न क्षेत्रों में सुशासन की स्थापना में सक्रिय भागीदारी निभाते हैं, वहीं जो नागरिक अपनी सक्रिय भागीदारी नहीं निभाते, ऐसे निष्क्रिय नागरिक देश की अवन्नति एवं अवांछनीय परिस्थितियों के कारक बनते हैं।

शासन व्यवस्था के विभिन्न स्वरूपों (यथा–राजतंत्र, कुलीनतंत्र, एकतंत्र, लोकतंत्र) में लोकतंत्र ही सर्वश्रेष्ठ शासन व्यवस्था है, जहां जनता स्वयं अपने प्रतिनिधियों का चुनाव करती है। साथ ही सुशासन प्राप्त करने के लिए सर्वाधिक उपयुक्त व्यवस्था लोकतंत्र ही है जिसमें उत्तरदायित्व, पारदर्शिता, संवेदनशीलता आदि मूल्यों की स्थापना संभव है।

किंतु वर्तमान में लोकतंत्र में कई समस्याएं उत्पन्न हो गयी है। अपारदर्शिता, भ्रष्टाचार, संवेदनहीनता, कर्तव्यनिष्ठता का अभाव आदि कई चुनौतियां है जिसके कारण सुशासन की स्थापना अभी दूरगामी लक्ष्य है। समर्थ व सक्षम नगारिक ही सक्षम देश का निर्माण कर सकते हैं। इस हेतु नागरिकों में कुछ बुनियादी मूल्यों – त्याग, संवेदना, तार्किकता, राजनैतिक जागरूकता, व्यक्तिगत स्वतंत्रता व सामूहिक हित आदि का विकास करने हेतु उन्हें समुचित अवसर एवं आधार उपलब्ध कराना होगा।

चूंकि कल्याणकारी राज्य उत्तरदायी एवं पारदर्शी शासन व्यवस्था अर्थात् सुशासन की स्थापना हेतु वांछित मूल्यों से युक्त नागरिकों की आवश्यकता होती जिससे कि लोकतंत्र को भीड़तंत्र बनने से रोका जा सकता है। अतः इसका दूसरा महत्वपूर्ण पहलू यह है कि मनुष्यों को उत्तम नागरिक/सक्रिय नागरिक बनाने हेतु आवश्यक मूल्यों की स्थापना कैसे की जाए?

व्यक्ति में मूल्यों का विकास किसी एक समय विशेष पर नहीं होता है। मनुष्य जन्म से लेकर मृत्यु तक 'आजीवन' सीखने की प्रक्रिया से गुजरता है, किंतु कुछ बुनियादी मूल्य वह अपने जीवन के आरम्भिक दौर में ही सीख जाता है। यथा– समताभाव, दया, संवेदनशीलता, आदि। मूल्य निर्माण में परिवार, समाज, शिक्षा, शैक्षणिक संस्थाओं एवं शासन व्यवस्था अपनी महत्वपूर्ण भूमिकाएं निभाते है। शिक्षा एवं संस्कृति मनुष्यों में मूल्यों के परिमार्जन का कार्य करती है तथा उसके चरित्र की दिशा तय करती है। शिक्षा एवं संस्कृति का स्वरूप क्या होगा एक सीमा तक इसका निर्धारण किसी शासन व्यवस्था द्वारा ही होती है।[2] किसी शासन व्यवस्था द्वारा निर्धारित नियमों कानूनों, विभिन्न संस्थाओं का निर्माण जब जनकल्याण के उद्देश्य से किया जाता है तो मनुष्यों को अपने सर्वांगीण विकास का अवसर प्राप्त होता है। राज्य में सुशासन होने पर शासन जनकेन्द्रीत होता है तथा समाज में भी ऐसे मूल्यों को प्रोत्साहन मिलता है जो सामुहिक कल्याण सुनिश्चित करते हैं[3] तथा पिछड़े व कमजोर वर्गों को मुख्य धारा से जोड़ने में सहायक होते हैं। साथ ही पश्चगामी रीतियों व पूर्वाग्रहों को निरूद्ध करते हैं।

इस प्रकार सक्रिय नागरिक अपने सामूहिक प्रयास से सुशासन की स्थापना में सहयोग करते हैं वहीं सुशासन होने पर राज्य नागरिकों में वांछित मूल्यों के विकास हेतु आवश्यक परिस्थितियां उपलब्ध कराने के कर्तव्य को पूरा कर पाता है।

लेकिन वर्तमान में अतिभौतिकवाद एवं उपभोक्तावाद के कारण समय के साथ मूल्यहीनता का स्तर बढ़ा है। हमें जीवन के हर पहलू में मूल्यहीनता का सामना करना पड़ रहा है। जीवन की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति न हो पाना, बेकारी, गरीबी, संसाधनों का असमान वितरण आदि के कारण उत्पन्न परिस्थितियों में मूल्यों का हास होता जा रहा है। शासन व्यवस्था में सच्चे नेतृत्व का अभाव, जनता का शोषण, सत्ता का लालच, राजनैतिक मूल्यों के ह्रास का कारण बन रहा है, वहीं जाति व्यवस्था, असंवेदनशीलता, पुरूषवादी सोच, परम्परागत रूढ़ियों एवं स्वार्थवाद ने समाज एवं परिवार में मूल्यों के हनन को बढ़ावा दिया है। एकल–परिवार एवं एकल माता–पिता के कारण भी व्यक्ति में बुनियादी मूल्यों के विकास में बाधा उत्पन्न हो रही है। साथ ही आर्थिक एवं तकनीकी प्रगति ने मनुष्यों के नैतिक पक्ष की अवहेलना की है। विज्ञान के विकास ने उपभोक्तावाद, अतिभौतिकवाद, पर्यावरण ह्रास, जनसंहारक हथियारों का विकास आदि को संभव बनाया जिसके कारण कई नैतिक मूल्यों अवहेलना की जाती है। इसके अलावा प्राचीन समय में जहां सभी धर्मों के समन्वय पर बल दिया गया तथा उनकी अच्छाईयों पर बल दिया, वहीं आज विभिन्न धर्मों के प्रति साम्प्रदायिक/असहिष्णु दृष्टिकोण, पाखण्ड व आडम्बर के कारण धार्मिक मूल्यों का भी पतन हो रहा है। दोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली, प्रतिस्पर्धा, दोषपूर्ण नीतियों एवं स्वार्थवादी नेतृत्व के कारण विभिन्न संस्थाओं द्वारा नागरिकों को मूल्य निर्माण हेतु आवश्यक परिवेश उपलब्ध कराने में समर्थ न हो पाना भी मूल्यों हनन का प्रमुख कारण है।

विभिन्न क्षेत्रों में मूल्यों के ह्रास को रोकने तथा वांछित मूल्यों के विकास हेतु विभिन्न स्तरों पर प्रयास करना अपेक्षित है। मूल्यों की निर्माणकारी विभिन्न परिस्थितियों एवं निर्माणकारी सहायक संस्थाओं में व्यापक स्तर पर सुधार आवश्यक है। परिवार किसी भी मनुष्य में नैतिक मूल्यों का बीज डालने वाली बुनियादी इकाई है एवं इन बीजरूपी मूल्यों को समाज, विद्यालय आदि बाहरी संस्थाओं द्वारा पोषण प्राप्त होता है। शिक्षा एवं संस्कृति मनुष्य के चरित्र निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। शासन द्वारा प्राथमिक एवं विश्वविद्यालय स्तर पर ऐसी व्यवस्था की जाए ताकि शिक्षा के सभी पक्षों–संज्ञानात्मक, भावात्मक एवं क्रियात्मक का संतुलित विकास हो सके तथा मनुष्य में सांस्कृतिक मूल्यों का विकास भी हो सके ताकि मनुष्य उत्कृष्ट चरित्र का निर्माण कर सके।

अतः सुशासन की ओर अग्रसर होना, जहां जनकल्याण को सुनिश्चित करते हैं, वहीं सभी मनुष्यों को अपने सर्वांगीण विकास के समुचित अवसर प्रदान करने की प्रतिबद्धता को भी प्रदर्शित करता है। उसी प्रकार सक्रिय नागरिक भागीदारी, राजनैतिक चेतना, मूल्य आधारित शिक्षा, मौलिक कर्तव्यों के प्रति पर्याप्त प्रतिबद्धता आदि सुशासन को निर्धारित करते हैं। इस प्रकार सुशासन एवं सभ्य समाज साथ–साथ चलते हैं। किसी एक के अभाव में दूसरे की अपेक्षा करना निरर्थक है।

संदर्भ

1. शेखावत, डॉ. राजवीर (संपा), भारतीय नीतिमीमांसा, डिम्पल पब्लिकेशन्स, जयपुर।
2. गुप्ता, डॉ. सुनील सिंह, डॉ. कमल कुमार, सुशासन, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।
3. वेदव्यास, महाभारत व रामनारायण दत शास्त्री (अनुवादक), गीताप्रेस, गोरखपुर।